International Journal of Enhanced Research in Educational Development (IJERED)
ISSN: 2320-8708, Vol. 9 Issue 2, March-April, 2021, Impact Factor: 7.326

आचार्य अभिनवगुप्त का विषय क्षेत्र

चन्द्र किशोर

असि0 प्रोफेसर, संस्कृत – विभाग, ब्रह्मावर्त पी0जी0 कालेज, मन्धना, कानपुर नगर, उ0प्र0।

सारांश

आचार्य अभिनवगुप्त भारतीय कलाचेतना के सर्वप्रथम विश्लेषक होने के साथ ही दार्शनिक और कवि भी हैं। तन्त्र, कश्मीर–शैवदर्शन, प्रत्यभिज्ञा–दर्शन और स्वतन्त्र कलाशास्त्र के वे ही सर्व–प्रथम उद्गाता हैं। जब हम कलाचेतना की बात करते हैं, तो उसमें समस्त ललित कलाओं का समावेश किये जाने की ओर हमारा लक्ष्य है। वस्तुतः यही सौन्दर्यान्वेशी चेतना का बीजरूप है। उनके ललित कलाओं का सीधा सम्बन्ध भगवान शिव और भगवती पार्वती से है। आचार्य अभिनवगुप्त भैरव–गुफा में शिवतत्त्व की ही परम साधना करते हैं और वहीं बैठकर नाट्यशास्त्र की 'अभिनवभारती' तथा ध्वन्यालोक की 'लोचन' जैसी टीकाओं के अलावा कश्मीर, शैव, प्रत्यभिज्ञा, त्रिक्, क्रम जैसे दार्शनिक मतों पर चिन्तन और विवेचना करते हैं। उनके पास विवेचना के अनेक दृष्टिकोण हैं, जिनसे वे दुरूह दार्शनिक सिद्धान्तों को सहज, स्वाभाविक और मनोवैज्ञानिक बनाने में सफल होते हैं । [1]

प्रस्तावना

दार्शनिक, रहस्यवादी एवं साहित्यशास्त्र के मूर्धन्य आचार्य अभिनवगुप्त कश्मीर–शैव और तन्त्र के महान पण्डित थे। वे सङ्गीतज्ञ, कवि, नाट्यकार, धर्मशास्त्री एवं तर्कशास्त्री भी थे। व्याकरण के इतिहास में महाभाष्यकार पतंजलि को तथा अद्वैत–वेदान्त के इतिहास में भामतीकार वाचस्पति मिश्र को जो गौरव और उत्कर्ष आदर प्राप्त हुआ है, वही गौरव एवं उत्कर्ष आदर आचार्य अभिनवगुप्त को तन्त्र तथा अलङ्कारशास्त्र के इतिहास में प्राप्त हुआ है। इन्होंने रस–सिद्धान्त की मनोवैज्ञानिक व्याख्याकर अलङ्कारशास्त्र को दर्शन के उच्च स्तर पर प्रतिष्ठित किया और प्रत्यभिज्ञा तथा त्रिक् खोजो को प्रौढ़ भाष्य प्रदान करते हुए उन्हें तर्क की कसौटी पर व्यवस्थित किया। आचार्य अभिनवगुप्त तन्त्रसाहित्य, स्तोत्रसाहित्य, प्रत्यभिज्ञाशास्त्र, काव्यशास्त्र और नाट्यशास्त्र के प्रौढ़ आचार्य थे तथा इन क्षेत्र पर अनेक मौलिक ग्रन्थों, टीकाओं तथा स्तोत्रों का निर्माण किया है। आचार्य अभिनवगुप्त कोरे शुष्क तर्क ही नहीं , अपितु साधना जगत् के गुह्य ज्ञान के मर्मज्ञ साधक भी थे।

मुख्यशब्द

भारतीय कलाचेतना, सौन्दर्यान्वेशी, ललित कला, शिवतत्त्व, परमसाधना, कश्मीर–शैव, रहस्यवादी, साधना–जगत्, गुह्यज्ञान के मर्मज्ञ साधक।

अध्ययन का उद्देश्य

आचार्य अभिनवगुप्त के विषय–क्षेत्र का परिज्ञान कराना।

भारत की ज्ञान–परम्परा में आचार्य अभिनवगुप्त और कश्मीरी–शैवदर्शन को 'संगम–तीर्थ' के रूप में कहा जा सकता है। कश्मीर केवल शैव–दर्शन की ही नहीं, अपितु बौद्ध, मीमांसा, नैयायिक, सिद्ध, तान्त्रिक, सूफी आदि परम्पराओं का भी संगम रहा है। आचार्य अभिनवगुप्त भी अद्वैत एवं प्रत्यभिज्ञादर्शन के प्रतिनिधि आचार्य तो हैं ही, साथ ही उनमें एक से अधिक ज्ञान–विधाओं का भी समाहार है। आचार्य अभिनवगुप्त का विषय–क्षेत्र निम्नवत् है–

1. तन्त्र साहित्य
2. स्तोत्र साहित्य
3. प्रत्यभिज्ञाशास्त्र
4. काव्यशास्त्र और नाट्यशास्त्र

तन्त्र साहित्य

तन्त्र साहित्य से आचार्य अभिनवगुप्त की तान्त्रिक विचारधारा का पता चलता है। शैवमतावलम्बियों की यह धारणा है कि वेदों की भांति शैवागम भी चिरन्तन है। इस तथ्य का स्पष्टीकरण आचार्य अभिनवगुप्त ने 'मालिनीविजय वार्तिक' नामक टीका में किया है। त्रिक् नामक दार्शनिक चिन्तनधारा के अनुसार व्यक्तदृष्टि दो प्रकार की होती है–एक का सम्बन्ध वाणी के साथ तथा दूसरे का सम्बन्ध द्रव्य के साथ है, वाच्य–वाचक भाव से। वाणी भी दो प्रकार की मानी गई है–दिव्य तथा मानवीय। शैवागम दिव्य वाणी है एवं अपने इस स्वरूप में परमविमर्श की स्थूलतम अभिव्यक्तियाँ हैं। यह विमर्श व्यक्ति के उस विमर्श से भिन्न है, जिससे सामान्य व्यवहारिक वाणी का जन्म होता है, जैसा कि 'परात्रिंशिका विवरण' के परिचय में निरूपित कर आये हैं कि 'वाक्' का अस्तित्त्व चिरन्तन है तथा वह 'परा' नामक तत्त्व से एकात्मस्वरूप है। आगम साहित्य दिव्यवाणीमात्र है, इस रूप में उनका भी अस्तित्त्व शाश्वत है। अतएव 'त्रिक्' दर्शनशास्त्र की विचारधारा के अनुसार शैवागमों की उत्पत्ति किसी भी ऐतिहासिक काल में असम्भव है। दिव्य इच्छाशक्ति के अनुसार उनका प्रकटीकरण होता रहता है–Abhinavgupta: Historical Backgraound of his thought.[2]

सतयुग से लेकर कलयुग तक का यह शैवगमों का पुरातन शैली में लिखा गया इतिहास है। आचार्य अभिनवगुप्त ने इसका उल्लेख 'तन्त्रालोक' के छत्तीसवें अध्याय (तन्त्रलोक आह्निक, 36/381–388) में किया है। इसका आधार सिद्धतन्त्र की प्रमाणिकता तथा वह परम्परा प्राप्त ज्ञान है, जो उन्होनें अपने गुरुजनों से सुना था–

श्रीसिद्धादिविनिर्दिष्टा गुरुभिश्च निरूपिता।
भैरवो भैरवी देवी स्वच्छन्दो लाकुलोऽणुराट्।।
गहनेशोऽब्जजः शक्रो गुरुः कोट्यपकर्षतः।
नवभिः क्रमशोऽधीतं नवकोटिप्रविस्तरम्।।
एतैस्ततो गुरुः कोटिमात्रात् पादं वितीर्णवान्।
दक्षादिभ्य उभौ पादौ संवर्तादिभ्य एव च।।
पादं च वामनादिभ्यः पादार्धं भार्गवाय च।
पादपादं तु वलये पादपादस्तु योऽपरः।।
सिंहायार्ध ततः शिष्टा द्वौभागौ विनताभुवे।
पादं वासुकिनागाय खण्डाः सप्तदश त्वमी।।
स्वर्गार्धं रावणोऽथ जह्न रामोऽर्धमप्यतः।
विभीषणमुखादाप गुरुशिष्यविधिक्रमात्।। [3]

किन्तु जब कलयुग का विकास हो गया, शैवतान्त्रिक परम्परा के ज्ञाता ऋषि अगम्य स्थानों में जाकर अवकाश ग्रहण करने लगे। इस प्रकार शनैः शनैः शैवागम परम्परा का लोप होने लगा। [4]

शैवमत से सम्बद्ध विभिन्न दार्शनिक सम्प्रदायों में ईसा की चतुर्थ शताब्दी के अन्त तक कोई मतभेद नहीं था। इसका समर्थन आचार्य अभिनवगुप्त द्वारा किये गये आदिकालीन शैवमत के निरूपण से हो जाता है। सम्भवतः उस काल में शैवमत एक विशेष देवता के रूप में प्रतिष्ठित था। इसी देवता के नाम के आधार पर इस मत का भी नामकरण किया गया। उस काल में शैवमत सम्भवतः धर्म के रूप में प्रतिष्ठित था। परवर्तीकाल में बौद्ध–दर्शनशास्त्र के परिणाम स्वरूप इसमें दार्शनिक तत्वों का समावेश हुआ। [5]

शैवागमों को तन्त्रों (सम्प्रदायों) के आधार पर तीन वर्गों में विभाजित किया जा सकता है–

1. द्वैतवादी तन्त्र
2. द्वैताद्वैतवादी तन्त्र
3. अद्वैतवादी तन्त्र

द्वैतवादी तन्त्र

आचार्य अभिनवगुप्त ने (तन्त्रालोक–1/35 में) इन तन्त्रों का स्पष्ट विभाजन निम्नलिखित रूप में किया है–

दशाष्टादशवस्वष्टभिन्नं यच्छासनं विभोः। [6]

उक्तश्लोक की व्याख्या करते हुए जयरथ ने तन्त्रों की सूची निम्नलिखित रूप में दी है–

1. **कामज 2. योगज 3. चिन्त्य 4. मौकुट 5. अंशुमत 6. दीप्ति, 7. कारण, 8 अजित, 9 सूक्ष्म, 10 सहस्र।** [7]

स्वयं जयरथ (तन्त्रालोक व्याख्या–1/39) के अनुसार उक्त विभाजन श्री श्रीकष्ठी की प्रमाणिकता पर आधारित है–

एतच्च श्री श्रीकष्ठ्यम् अमिधान पूर्वकं विस्तरता उक्तम्। [8]

मृगेन्द्र तन्त्र की प्रस्तावना (प्रस्तावना, मृगेन्द्रतन्त्र टीका, 2) में निम्नलिखित दशतन्त्रों के नामों का उल्लेख है–

कामिजं योगजं वाथ तथा चिन्त्यश्च कारणम्।
अजितं दीप्तसूक्ष्मौ च सहस्रश्च तथांशुमान्।।
सुप्रभेदास्तथा ह्यैते शैवाः सम्परिकीर्तिताः। [9]

द्वैताद्वैतवादी तन्त्र

तन्त्रालोक के अनुसार कुछ द्वैताद्वैतवादी तन्त्र निम्नलिखित हैं–
1. विजय 2. विश्वास 3. मद्गीत 4. पारमेश्वर 5. मुखविम्ब 6. सिद्ध 7. सन्तान 8. वारसिंहक 9. चन्द्रांशु 10. वीरभद्र 11. आगनेय 12. स्वम्भुव 13. विसर. 14. रौरव 15. विमल 16. किरण 17. ललित 18. सौरभेय।
आचार्य अभिनगुप्त ने तन्त्रालोक में उपर्युक्त कुछ तन्त्रों के सिद्धान्तों के समर्थन में उद्धरण दिये हैं। [10]

अद्वैतवादी तन्त्र

अद्वैतवादी तन्त्रों को आठ समूहों में विभक्त करके प्रत्येक समूह में आठ तन्त्रों का समावेश किया गया है। इनमें निम्नलिखित रूप में प्रत्येक तन्त्र समूह का भी एक नाम है–

1. भैरवतन्त्र
1. स्वच्छन्द 2. भैरव 3. चण्ड 4. क्रोध 5. उन्मत्त–भैरव 6 असितांग 7. महोच्छूस्म 8. कपालीश।

2. यामल तन्त्र
1. ब्रह्मयामल 2. विष्णु यामल 3. स्वच्छन्दयामल 4 रुरु 5. आथर्वण 6. रुद्र 7. वेताल

3. मत्त
1. रक्त 2. लम्पट 3. लक्ष्मीमत 4. मत 5. चालिका 6. पिङ्गल 7. उल्फुल्लक 8. विश्वाध।

4. मङ्गल
1. पिचुभैरवी 2. तन्त्र भैरवी 3. तत 4. ब्रह्मी कला 5. विजया 6. चन्द्रा 7. मङ्गला 8. सर्वमङ्गला।

5. चक्राष्टक
1. मत्रचक्र 2. वर्ण–चक्र 3. शक्तिचक्र 4. कलाचक्र 5. बिन्दुचक्र 6. नादचक्र 7. गुह्यचक्र 8. खचचक्र

6. बहुरूपा
1. अन्धक 2. रुरुभेद 3. अज 4. मूल 5. वर्णबन्ध 6. विडंग 7. मातृरोदन 8. ज्वालिन।

7. वागीश
1. भैरवी 2. चित्रिका 3. हंसा 4. कदम्बिका 5. हृल्लेखा 6. चन्द्रलेखा 7. विद्युल्लेखा 8. विद्युमत।

8. शिखाष्टक
1. भैरवी शिखा 2. वीणा 3. वीणामणि 4. सम्मोह 5. डामर 6. अथर्वक 7. कबन्ध 8. शिरच्छेद।

शैव–अद्वैतवादी उपर्युक्त तन्त्रों की सूची का आधार श्रीकष्ठी की प्रामाणिकता है। [11]

स्तोत्र साहित्य

इष्ट–देवी–देवताओं को प्रसन्न करने हेतु स्तुतिपरक या स्तुत्यात्मकश्लोकों को स्तोत्र कहते हैं। विभिन्न देवी–देवताओं को प्रसन्न करने हेतु वेदों, पुराणों तथा काव्यों में सर्वत्र सूक्त तथा स्तोत्र भरे पडे हैं, जो अनेक भक्तों द्वारा इष्ट देव की अराधना हेतु रचे गये हैं। महाकवि कालिदास के अनुसार –**'स्तोत्रं कस्य ना तुष्टये'** अर्थात् संसार में ऐसा कोई भी प्राणी नहीं है, जो स्तुति से प्रसन्न न हो जाता हो। आचार्य अभिनवगुप्त ने अनेक स्तोत्रग्रन्थों की रचना की है। जिनमें 5 प्रमुख स्तोत्र हैं–

1. क्रम स्तोत्र
2. भैरव स्तोत्र
3. देहस्थ देवता चक्र
4. अनुभवनिवेदन
5. रहस्यपचंदशिका

क्रमस्तोत्र

क्रमस्तोत्र में शिव के साथ एकात्मता प्राप्ति हेतु 'शिवनति' को प्रथम उपाय बताया गया है–

शिवैकात्म्य प्राप्तौ शिवनतिरुपायः प्रथमकः। [12]

स्तोत्र के अन्तिम श्लोक में इस कृति का रचनाकाल स्वयं कवि द्वारा बताया गया है–

षट्षष्ठि नामके वर्षे नवम्यामसितेऽहनि।
मयाभिनवगुप्तेन मार्गशीर्षे स्तुतः शिवः।। [13]

भैरवस्तोत्र

भैरवस्तोत्र में भैरव को चिन्मय, अनादि, अनन्त एवं अनाथों की शरण बताते हुए बन्दना की गई है–

व्याप्तचराचरभावविशेषं चिन्मयमेकमन्तमनादिम्।
भैरवनाथमनाथशरण्यं त्वन्मयचित्ततया हृदि वन्दे।। [14]

भैरव के माध्यम से सबके साथ आत्मसम्बन्ध है, संसार से भय–भीत होने का प्रश्न ही नहीं उठता। कहा जाता है कि अपने अन्तिम समय में आचार्य अभिनवगुप्त इसी स्तोत्र को पढ़ते हुए भैरवगुफा में प्रविष्ट हुए थे। अन्तिम श्लोक में इस स्तुति का समय भी इस प्रकार दिया गया है–

वसुरपौषे कृष्णदशम्यामभिनवगुप्तः स्तवमिमम करोत्। [15]

देहस्थदेवताचक्रस्तोत्र

देहस्थ देवता चक्रस्तोत्र में गणपति, बटुक,भैरव, सद्गुरू, आनन्दभैरवी, ब्रह्माणी, अम्बा, शाम्भवी, कौमारी, वैष्णवीशक्ति, वाराही, इन्द्राणी, चामुण्डा, महालक्ष्मी, क्षेत्रपति (आत्मा) इन सभी देहस्थ देवताओं की वन्दना की गई है, जो शिवरूप होते हुए भी पशुरूप को प्राप्त कर शरीर में स्थित है–

नौमि सदोदितमित्थं निजदेहगदेवताचक्रम्। [16]

अनुभवनिवेदन

अनुभव निवेदन में योग के अन्तर्गत शाम्भवी, मुद्रा, ध्यान, मन्त्र, आदि के उल्लेख के साथ शैवमत की पुष्टि की गई है। अन्तिम श्लोक इस प्रकार है–

मन्त्रः स प्रतिभाति वर्णरचना यस्मिन्नसंलक्ष्यते।
मुद्रा सा समुदेति यत्र गलिताकृत्स्ना क्रिया कायिकी।।
योगः स प्रयते यतः प्रवहणं प्राणस्य संक्षीयते।
त्वद्धामाधिगमोत्सवेषु सुधियां किं किं न नामाद्भुतम्।। [17]

रहस्यपंचदशिका

रहस्यपंचदशिका में उमा, रमा तथा सरस्वती को एक परादेवता के रूप में माना गया है। इन्हें शिव की बल्लभा कहा गया है–

प्रसीद सर्वमङ्गले शिवे शिवस्य बल्लभे।
उमे रमे सरस्वति त्वमेव देवता परा।। [18]

इसमें पौराणिक पात्रों को शैवदर्शन के दार्शनिक तत्त्व के रूप में चित्रित किया गया है। इसमें 'शिवविभूति का विवेचन' किया गया है। इस ग्रन्थ का मूल विषय शिव–पार्वती के आध्यात्मिक स्वरूप के आधार पर शिव–परम शिव के साथ 'परा' को एकात्मरूप से प्रस्तुत किया गया है। 'परा' को पुराणोक्त दिव्य–शक्तियों से समन्वित लक्ष्मी तथा सरस्वती कहा गया है। [19]

प्रत्यभिज्ञाशास्त्र

प्रत्यभिज्ञा का अर्थ है– ज्ञात वस्तु को फिर से जानना। इसका शब्दिक अर्थ है– पहचान। प्रत्यभिज्ञा वह मानसिक क्रिया है, जिसमें हम अपनी चेतना की पूर्ववर्ती दशाओं का स्मरण करते हुए उनको पुनः संयुक्त करने की चेष्टा करते हैं। यह वह युक्ति है, जिसमें चेतना की वर्तमान अवस्था से पूर्ववर्ती अवस्था पर पहुँचते हैं। स्मृति तथा प्रतिबोध में अन्तर है। स्मृति संस्कारजन्यज्ञान है, किन्तु प्रतिबोध में संस्कारजन्य ज्ञान के अतिरिक्त उसमें ज्ञात वस्तु का वर्तमान में प्रत्यक्ष अस्तित्त्व आवश्यक है। उदाहरण के लिए 'सोऽयं देवदत्तः'– यह वही देवदत्त है, किसी एक देवदत्त नामक व्यक्ति को देखकर उसके विषय में पूर्व देखे (प्रत्यक्ष किये) गये देवदत्त का स्मरण करता हुआ वर्तमान में प्रत्यक्ष देवदत्त के साथ एकात्मता स्थापित करते हुए इस निर्णय पर पहुँचता है, 'यह वही देवदत्त है' जिसका मैंने पूर्व में प्रत्यक्ष किया था। उस समय देवदत्त विषयक ज्ञान का कारण उतनी ही मात्रा में है, जितना वह स्मृति विषयक संस्कार है। जिसका ज्ञान ज्ञेय (देवदत्त) वस्तु के पूर्व कालिक प्रत्यक्ष से किया गया है। इस प्रकार प्रतिबोध को पूर्व में हुए प्रत्यक्ष ज्ञान के सहित वर्तमान में भी उस विषय का अस्तित्त्व आवश्यक होता है। [20]

इस प्रकार समान्यतया प्रत्यभिज्ञा पहचान के अर्थ में प्रयुक्त होता है। प्रकृत स्थल पर प्रत्यभिज्ञा का अर्थ है आत्म–ज्ञान। प्रति–ज्ञात होने पर भी अज्ञानवश (मोहवश) विस्मृत हुआ। अभि–अभिमुख रूप से स्पष्टता जो ज्ञा–ज्ञान (प्रकाश) है, वह प्रकाश है। उदाहरण के लिऐ 'सोऽहम्'–यह स्वत्त्वाभास पूर्व में अनुभूति रहता है किन्तु अज्ञान के आवरण के कारण वह प्रकाशित नहीं हो पाता है। पुनः शास्त्रों के अनुशीलन से, साधन मार्ग से (साधन चटुष्टय से) पूर्व में अनुभव किये गये आत्म विषयक ज्ञान का वर्तमान से पूर्वानुभूत ईश्वरात्मक तत्त्व के अभिमुख होने पर प्रतिसन्धान के बल से 'वही (ईश्वर) मैं हूँ' इस प्रकार का जो ज्ञान उदित होता है, वह प्रत्यभिज्ञा है। [21]

ईश्वर प्रत्यभिज्ञाविमर्शिनी में इसका उल्लेख इस प्रकार है–
प्रतीपमात्माभिमुख्येन ज्ञानं प्रकाशः प्रत्यभिज्ञा। प्रतीपमितिस्वात्मावभासो हि न अनुभूतपूर्वो अविच्छिन्नप्रकाशत्वात् तस्य, स तु तच्छक्तयैव विच्छिन्न इव विकल्पित इव लक्ष्यत इति वक्ष्यते। प्रत्यभिज्ञा च भातभासमानरूपानुसन्धनात्मिका 'स एवायं चैत्र' इति प्रतिसन्धानेन अभिमुखी भूते वस्तुनि ज्ञानम्। लोकेऽपि एतत्पुत्र एवङ्गुण एवं रूपक इत्येवं वाः अन्ततोऽपि सामान्यात्मना वा ज्ञातस्य पुनरभिमुखीभावावसरे प्रतिसन्धितमेव ज्ञानं प्रत्यभिज्ञा इति व्यवह्रियते। इहापि प्रसिद्धपुराणसिद्धान्तागमानुमानादिविदितपूर्णशक्तिस्वभावे ईश्वरेसति स्वात्मन्यभिमुखीभूते तत् प्रतिसन्धानेन ज्ञानमुदेति .... नूनं स एन ईश्वरोऽहमिति। [22]

इस प्रकार प्रत्यभिज्ञा, स्मृति और अनुभव पर आधारित एक व्यक्ति विषयक ज्ञान होता है। यह संस्कार और इन्द्रिय द्वारा उत्पन्न होता है । पूर्वदृष्ट व्यक्ति का स्मरण–संस्कार, उसी का चक्षुरिन्द्रिय द्वारा साक्षात् अनुभव (प्रत्यक्ष)। भास्कर कष्ठ के अनुसार–

स्मरणानुभवारूढ़ा सामानाधिकरण्यधीः।
संस्कारेन्द्रियजन्या च प्रतयभिज्ञा प्रकीर्तिता।। [23]

प्रत्यभिज्ञाशास्त्र पर सोमानन्द विरचित 'शिवदृष्टि' ग्रन्थ है, जिसमें शिवद्वैतवाद का निरूपण किया गया है। इस ग्रन्थ पर सोमानन्द की लिखी हुई वृत्ति उपलब्ध नहीं है। आचार्य उत्पल की वृत्ति–चौथे आह्निक के 74वें श्लोक तक उपलब्ध है। सोमानन्द के विशिष्ट ज्ञान का परिचायक ग्रन्थ 'ईश्वरप्रत्यभिज्ञा' आचार्य उत्पल द्वारा विरचित ग्रन्थ है। इसको 190 कारिकाओं के चार अधिकारों एवं सोलह आह्निको में विभक्त किया गया है–

क–ज्ञानाधिकार–– 8 आह्निक–– 88 कारिकाएँ
ख– क्रियाधिकार – 4 आह्निक – 53 कारिकाएँ
ग– आगमाधिकार – 2 आह्निक – 31 कारिकाएँ
घ–तत्त्वसंग्रहाधिकार – 2 आह्निक – 18 कारिकाएँ

इस प्रकार सम्पूर्ण ग्रन्थ में कुल–4 अधिकार, 16 आह्निक एवं 190 कारिकाएँ हैं। [24]

आचार्य अभिनवगुप्त प्रणीत 'तन्त्रालोक' स्वयं में एक विश्वकोश है, जिसमें शैवों के कर्मकाण्ड, योग, धर्म, उपासना, दर्शन आदि का विस्तृत विवेचन किया गया है। शैवदर्शन पर दार्शनिकों ने अनेक स्तोत्र लिखे, जिनमें आचार्य उत्पल की ' शिवस्तोत्रावली' सबसे अधिक प्रसिद्ध है। [25]

काव्यशास्त्र और नाट्यशास्त्र

साहित्य तथा दर्शन का शोभन समन्वय करने का श्रेय आचार्य अभिनवगुप्त को ही है। सर्वतन्त्र स्वतन्त्र होंने के साथ ही ये एक अलौकिक साधक पुरुष थे। साहित्यशास्त्र (काव्यशास्त्र एवं नाट्यशास्त्र) में आचार्य अभिनवगुप्त की तीन कृतियाँ अत्यन्त प्रसिद्ध हैं। ये तीन कृतियाँ हैं–

1. ध्वन्यालोकलोचन टीका।
2. अभिनवभारती।
3. काव्यकौतुकविवरण। [26]

ध्वन्यालोक–लोचन

आचार्य आनन्दवर्धन की 'ध्वन्यालोक' की यह टीका वास्तव में आलोचकों को लोचन (आलोक दृष्टि) प्रदान करती है। वस्तुतः इस टीका की सहायता के बिना ध्वन्यालोक में प्रतिपादित तत्त्वों का सम्यक् बोध नहीं हो सकता था। इस शास्त्र में रस–शास्त्र के प्राचीन व्याख्याकारों के सिद्धान्त–जिनकी उपलब्धि अन्यत्र दुर्लभ है, एकत्र दिये गये हैं। यह टीका इतना प्रौढ़ और पाण्डित्यपूर्ण है कि कहीं–कहीं पर मूल की अपेक्षा टीका ही दुरूह हो गई है। ध्वन्यालोक पर 'लोचन' से पहले 'चन्द्रिका' नाम की टीका लिखी गई थी और इसके लेखक इन्हीं के कोई पूर्वज थे–

किं लोचनं विनालोको भाति चन्द्रिकयाऽपि हि।
तेनाभिनवगुप्तोऽत्र लोचनोन्मीलनं व्याघात्।। [27]

'लोचन' में इन्होंने इस टीका का खण्डन अनेक स्थलों पर किया है। अन्त में इन्होंने यह भी स्पष्ट लिखा है कि –'अलं निजपूर्ववंश्यैर्विवादेन' अर्थात् अपने पूर्वजों के साथ अधिक विवाद करने से क्या लाभ ? साहित्यशास्त्र में 'लोचन' का महत्त्व व्याकरण में 'महाभाष्य' के समान है। [28]

अभिनवभारती

आचार्य भरत के नाटय्शास्त्र पर लिखी गई यह उपलब्ध टीका है। भरतमुनि के नाट्यशास्त्र को समझने के लिए इस टीका का गम्भीर अनुशीलन नितान्त अपेक्षित है। इसमें प्राचीन आलंङ्कारिकों और सङ्गीतकारों के मतों का उपन्यास सुन्दर ढंग से हुआ है। भारत की प्राचीन नाट्यकला–सङ्गीत्, अभिनय, छन्द, करण, अङ्गहार आदि के रूप को यथार्थ रूप में समझने के लिए इस टीका का परिशीलन अत्यन्त आवश्क है। अभिनवभारती टीका नहीं, प्रत्युत एक स्वतन्त्र मौलिक ग्रन्थ है। यह टीका अत्यन्त विशद्, वैदुष्यपूर्ण एवं मर्मस्पर्शिणी है। इसमें आचार्य भरत के रस सूत्र का, पूर्वाचार्यों के रस–विषयक मान्यताओं का खण्डन करते हुए रस–सिद्धान्त का प्रमाणिक एवं युक्तिसङ्गत विवेचन किया गया है। [29]

काव्यकौतुक विवरण

आचार्य भट्टतौत रचित 'काव्यकौतुक' के ऊपर आचार्य अभिनवगुप्त ने 'विवरण' लिखा है। खेद का विषय है कि यह ग्रन्थ मूलग्रन्थ के साथ ही अनुपलब्ध है। इसके अस्तित्त्व का परिचय अभिनवभारती के उल्लेख से मिलता है। [30]

निष्कर्षतः

कह सकते हैं कि भारत की ज्ञान–परम्परा में आचार्य अभिनवगुप्त और कश्मीरी–शैवदर्शन को 'संगम–तीर्थ' के रूप में कहा जा सकता है। कश्मीर केवल शैवदर्शन का ही नहीं , अपितु बौद्ध, मीमांसक, नैयायिक, सिद्ध, तान्त्रिक, सूफी आदि परम्पराओं का भी संगम रहा है। आचार्य अभिनवगुप्त भी अद्वैत एवं प्रत्यभिज्ञा–दर्शन के प्रतिनिधि आचार्य तो हैं ही, साथ ही उनमें एक से अधिक ज्ञान–विधाओं का भी समाहार है।

सन्दर्भ–सूची

1. मिश्र, भारतेन्दु (6 मार्च, 2018) अभिनवगुप्त–कश्मीर–शैवदर्शन (लेख), इन्टरनेट।
2. अवस्थी, प्रेमा (2017)। अभिनवगुप्त–एक परिचय। वाराणसी, भारत, चौखम्बा सुरभारती प्रकाशन। पृ–57
3. वही, पृ–59
4. वही, पृ–59
5. वही, पृ–62
6. वही, पृ–62
7. वही, पृ–62–63
8. वही, पृ–63
9. वही, पृ–63
10. वही, पृ–63
11. वही, पृ–64–65
12. वही, पृ–38
13. वही, पृ–39
14. वही, पृ–39
15. वही, पृ–39
16. वही, पृ–39
17. वही, पृ–39
18. वही, पृ–40
19. वही, पृ–40
20. वही, पृ–73
21. वही, पृ–73
22. वही, पृ–74
23. वही, पृ–74
24. वही, पृ–74
25. वही, पृ–75
26. आनन्दवर्धन (वि0सं0 2073)। गुप्त, अभिनव (ध्वन्यालोक 'लोचन' टीका समन्वित)। राय, गङ्गासागर (सम्पादक)। वाराणसी, भारत, चौखम्बा संस्कृत भवन। भूमिका, पृ–27
27. वही, भूमिका, पृ–27–28
28. वही, भूमिका, पृ–28
29. वही, भूमिका, पृ–28
30. वही, भूमिका, पृ–28